दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

एक देश, एक चुनाव, अनेक आशंकाएं

आपको प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को इस बात का श्रेय देना पड़ेगा कि वे ऐसे मुद्दे ले आएंगे, जो लोगों का ध्यान भटका देंगे। वे ऐसी चाल चलते हैं कि विपक्ष की प्रतिक्रिया कई हिस्सों में बंटी होती है और वह हमेशा अकाट्य तथ्य या तर्क नहीं दे पाता।

पुलवामा इसका एक जीता-जागता उदाहरण है। हर तरह से यह एक व्यापक खुफिया असफलता थी। जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल ने 15 फरवरी, 2019 को यह कहते हुए स्वीकार किया था कि- 'हम हाइवे से गुजर रहे विस्फोटकों से भरे वाहन का पता ही नहीं लगा सके, न जांच कर सके... हकीकत तो यह है कि हमें पता ही नहीं चला कि स्थानीय आतंकवादियों में ही फिदायीन भी है। यह भी हमारी खुफिया नाकामी का हिस्सा है।'

हमले के बाद कोई भी सरकार चुपचाप नहीं बैठ सकती। बालाकोट जवाब था, पाकिस्तान की तैयारी आधी-अधूरी थी, भारतीय वायुसेना ने लक्ष्यों पर हमले किए और पाकिस्तान ने भारतीय वायुसेना का एक विमान मार गिराया। हमले के बारे में संदेह नहीं है, बल्कि हताहतों की संख्या को लेकर है। ऐसे में हमारे पास क्या है? पुलवामा की चिंताजनक नाकामी और बालाकोट की बड़ी सफलता।

ध्यान बंटाना

नरेंद्र मोदी ने बहुत होशियारी से पुलवामा और बालाकोट की नाकामी को दबा दिया। पुलवामा में खुफिया नाकामी (और चालीस जवानों की दुखदायी मौत) को लेकर जिसने भी सवाल उठाए, उसे शरारत भरे तरीके से ऐसा करार दिया गया जैसे बालाकोट में भारतीय वायुसेना की सफलता पर सवाल कर रहा हो, और उसे राष्ट्रद्रोही करार दे दिया गया। विपक्ष, कम से कम हिंदीभाषी राज्यों में, इस लायक था नहीं कि वह इस चतुराई भरी चुनावी चाल का जवाब दे पाता और लोगों को पुलवामा की नाकामी और बालाकोट की सफलता के बारे में फर्क समझा पाता। मोदी ने बहुत आसानी से लोगों का ध्यान भटका दिया और आर्थिकी में गिरावट, बेरोजगारी, किसानों का संकट, सांप्रदायिक विद्वेष, भीड़ हिंसा जैसे चुनावी मुद्दों को गायब कर दिया।

लोकसभा चुनाव के बाद ध्यान फिर से आर्थिकी में गिरावट, बेरोजगारी, किसान संकट, सांप्रदायिक नफरत, भीड़ हिंसा जैसे मुद्दों पर केंद्रित होना चाहिए। ये राष्ट्रपति के अभिभाषण के मुद्दे होने चाहिए थे, ये मुद्दे संसद में प्रधानमंत्री के जवाब में प्रमुखता से झलकने चाहिए थे, और ये बजट पूर्व चर्चा का मूल विषय होते। दुख की बात यह कि ऐसा नहीं हुआ और इसके बजाय मोदी का एक राष्ट्र एक चुनाव का नारा छाया हुआ है। लोगों का ध्यान बंटाने की यह एक नई युक्ति है।

असंवैधानिक

संघीय संसदीय लोकतंत्र में केंद्र सरकार और राज्य सरकार की मंत्रिपरिषद निचले सदन [अनुच्छेद 75(3)] और विधानसभा [अनुच्छेद 164(2)] के प्रति सामूहिक रूप से जवाबदेह होगी। विधायिका की 'जवाबदेही' से तात्पर्य यह है कि मंत्रिपरिषद को हर दिन हर घंटे विधायिका में बहुमत के विश्वास का सदुपयोग करना चाहिए। जब मंत्रिपरिषद बहुमत का समर्थन खो दे, तो इसे चले जाना चाहिए। अभिप्राय यह है कि ऐसे मंत्रिपरिषद के सदस्य पद पर तभी तक बने रह सकते हैं जब तक कि दूसरी मंत्रिपरिषद यह साबित न कर दे कि उसके पास बहुमत का जो समर्थन है वह संसदीय लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों के विपरीत है। कल्पना कीजिए, एक सरकार गिर जाती है, लेकिन सदन में कोई दूसरा व्यक्ति बहुमत का समर्थन नहीं जुटा पाता है, तो क्या ऐसे में हारा हुआ प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री पद पर बना रह सकेगा? ऐसा होना संसदीय अपवित्रता होगी। मध्यावधि चुनाव ही इसका एकमात्र कानून सम्मत जवाब है।

इसी तरह, संसदीय लोकतंत्र के विपरीत जो सुझाव हैं, उनमें यह कि एक निश्चित अवधि के बावजूद किसी विधानसभा का कार्यकाल बढ़ाया जा सकता है या उसमें कटौती की जा सकती है। मतदाता उम्मीदवारों को निश्चित कार्यकाल के लिए चुनते हैं, ऐसे में अगर विधानसभा का कार्यकाल बढ़ाया या घटाया जाता है तो ऐसा करना मतदाताओं का अपमान करना होगा।

स्पष्ट है, सरकार यह अच्छी तरह जानती है कि एक देश, एक चुनाव मौजूदा संविधान के तहत असंवैधानिक है, फिर भी इसका अभियान छेड़ा गया है। हालांकि इसके समर्थक अब भी इस बात को नहीं मानेंगे, उनका असल मकसद तो संविधान बदलना है। बदलाव की दिशा भी साफ दिखती है- एकात्मक, संघीय नहीं; मजबूत कार्यपालिका, कमजोर विधायिका; समरूपता, विविधता नहीं; एक-सी पहचान, बहुसंस्कृति नहीं; बहुमतवादी, आमराय नहीं। यह दिशा राष्ट्रपति शासन प्रणाली वाली सरकार की ओर जाती है।

तैयार रहिए

इस तरह ये सारी चीजें सिर्फ तभी हासिल की जा सकती हैं जब मौजूदा संविधान में व्यापक रूप से बदलाव किया जाए। ऐसा लगता है कि भाजपा संविधान संशोधन के विचार की अनिच्छुक और विरोधी इसलिए नहीं है, क्योंकि उसका मानना है कि आरएसएस ने तो निर्वाचित विधानसभा का प्रतिनिधित्व किया नहीं था, इसलिए मौजूदा संविधान की जिम्मेदारी उनकी नहीं है। यह जाहिर है कि आरएसएस और भाजपा अपनी पसंद का संविधान चाहते हैं और एक देश एक चुनाव संविधान में बदलाव की दिशा में पहला कदम है।

शासन की संघीय व्यवस्था में कोई देश ऐसा नहीं है, जिसमें राष्ट्रीय संसद और राज्य/ प्रांतीय विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाते हों। आस्ट्रेलिया, कनाडा और जर्मनी इसके सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। अमेरिका में राष्ट्रपति शासन प्रणाली है, इसलिए उससे तुलना नहीं की जा सकती। इसके अलावा, अमेरिका में एक साथ और अलग-अलग (एक चुनाव चार साल में और एक चुनाव हर दो साल में) चुनाव होते हैं। यह तर्क भी कि देश हर वक्त चुनाव में उलझा रहता है, खोखला है। इससे क्या फर्क पड़ता है कि कुछ राज्यों में चुनाव जब जरूरी हों तभी कराए जाएं? अगर कोई देश तथाकथित चुनावी माहौल में रहता है, तो वह अमेरिका है जहां हर दो साल में प्रतिनिधियों के चुनाव होते हैं! अमेरिका को इसमें कोई बुराई नजर नहीं आती।

भाजपा को अपने इरादे साफ करने चाहिए। अगर वह राष्ट्रपति शासन प्रणाली चाहती है तो खुल कर कहे। लोगों को फैसला करने दें कि इस वक्त देश की प्राथमिकताएं- गिरती अर्थव्यवस्था, बेरोजगारी, किसानों का संकट, सांप्रदायिक विद्वेष और भीड़ हिंसा जैसी समस्याओं से निजात पाना है या फिर पहले कार्यकारी राष्ट्रपति, आज्ञाकारी मंत्री और शक्तिविहीन संसद की स्थापना करना।

छीजती मेधा के दौर में

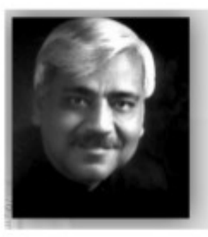

तीरंदाज

■ अश्विनी भटनागर

हर बुद्धिमान व्यक्ति में एक मूर्ख छिपा होता है। पर क्या हर मूर्ख में एक बुद्धिमान व्यक्ति विद्यमान होता है? वैसे किसी अक्लमंद आदमी की बेअक्ली जल्द ही पकड़ ली जाती है। पर अक्लमंद होने का यह मतलब बिल्कुल नहीं है कि वह हमेशा रोशन दिमाग ही रहेगा और उसकी बाती की लौ कभी फड़फड़ाएगी नहीं। कई बार ऐसा होगा कि उसका अक्ल से अनायास ही फासला हो जाए, पर इससे वह बेअक्ल साबित नहीं होता है। यह बात बेअक्ल पर भी लागू होती है। वह अचानक होशियारी कर सकता है, पर रहेगा बेवकूफ ही।

हम सब बहुत होशियार हैं। हमारा समाज भी ऐसा है कि हम गर्व से अपना जयघोष करते रहते हैं। पर क्या ऐसा वास्तव में है? कहीं ऐसा तो नहीं कि बुद्धिमता के दिव्यास्वपन में हम जी रहे हैं, जबकि हम बौड़म-दर-बौड़म होते चले जा रहे हैं? अगर एक तरह से देखा जाए तो पिछले कुछ सालों में वाट्स-ऐप्प यूनिवर्सिटी की शागिर्दगी जिस तरह से बढ़ी है, उससे बौड़मता का विकास साफ नजर आता है। हम मानें या न मानें, पर हम बुद्धिमता से बुद्धिहीनता की ओर सरपट फिसलते जा रहे हैं।

> अगर हम थोड़ी-सी भी गंभीरता से अपने आसपास देखें तो साफ हो जाएगा कि हमारे बौड़मपन की दर में लगातार वृद्धि हो रही है। तर्कनिष्ठ व्यवहार और संवाद लगातार घट रहा है और हम हर मुद्दे के अति सरलीकरण में जुटे हुए हैं। हम संकल्पना और व्यावहारिक जटिलता से मुंह चुराने लगे हैं।

भारत में तो अध्ययन का रिवाज नहीं है और न ही वैज्ञानिक प्रवृत्ति का चलन है। हम गंभीर अध्ययन नहीं करते हैं, पर अनुमान लगाने में विशेषज्ञ हैं, क्योंकि ज्ञान तो सब हम हजारों वर्षों पहले ही पा चुके हैं। ऐसी स्थिति में आज के हालात जानने के लिए हमारे पास पश्चिमी देशों में हो रहे शोध पर निर्भर रहने के आलावा कोई और चारा नहीं है। इन अध्ययनों से हम अपने हालात का मोटा-मोटा अंदाज लगाने के लिए मजबूर हैं।

खैर, लंदन के शोधकर्ता एडवर्ड डटन के दशकों लंबे अध्ययन के अनुसार पश्चिम के तमाम देशों में आईक्यू यानी बुद्धिलब्धता का स्तर कम होता चला जा रहा है। जिन देशों में उन्होंने अध्ययन किया, उनमें अति विकसित देश जैसे फ्रांस, जर्मनी, स्वीडन, डेनमार्क, नार्वे और फिनलैंड शामिल थे। डटन ने अपने शोध में पाया कि इन देशों के लोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी ज्यादा बुद्धिमान होने के बजाय मंदबुद्धि होते चले जा रहे हैं। यह देश हर साल आईक्यू पैमाने पर एक अंक का चौथाई हिस्सा खो रहे हैं। इस अध्ययन के आधार पर उनका कहना है कि हम बौड़मपन की ओर तेजी से अग्रसर हैं और अब वह दिन दूर नहीं, जब सरल संकल्पना और तर्कनिष्ठ विवेचना हमारी समझ से परे हो जाएगी। उनके हिसाब से बौड़मपन की प्रवृत्ति उन्नीस सौ नब्बे के दशक के मध्य से शुरू हो गई थी और अब वह सिर चढ़ कर बोल रही है।

मजे की बात यह है कि बुद्धिमता पिछली सदी में लगातार बढ़ती रही है। जेम्स फ्लींन ने इस पर एक आधिकारिक शोध किया था, जिसमें उन्होंने पाया था कि 1930 से पश्चिमी देशों में आईक्यू की बढ़त बड़ी तेजी से हुई थी, जो 1990 के आने तक शिथिल पड़ गई थी। उसके बाद इसमें गिरावट आने लगी थी। फ्लींन का कहना है कि शुरुआती दौर में कौशल और कारीगरी जीवनयापन के लिए जरूरी थी और इस वजह से लोग बुद्धि और हाथों का उपयोग भरपूर करते थे। इसके चलते आईक्यू का स्तर भी बढ़ने लगा था।

इक्कीसवीं शताब्दी में स्किल या कौशल की जरूरत कम हो गई है और उसके साथ आईक्यू भी घट रही है। फ्लींन का मानना है कि देशों की अर्थव्यवस्थाओं में जैसे-जैसे सेवा क्षेत्र बढ़ रहा है, वैसे वैसे जनसंख्या बौड़म होती जा रही है। इस क्षेत्र में काम करने के लिए न तो कौशल की जरूरत है और न ही अपनी बुद्धि के उपयोग की।

सोशल मीडिया की उपलब्धता भी हमारी बुद्धि को बहते पानी की तरह काट रही है। लोग अपना दिमाग खर्च करने की जगह फोन या कंप्यूटर पर निर्भर हो गए हैं। इससे अति सरलीकरण करने की प्रवृत्ति में भारी वृद्धि हुई है। जो चीज लोगों को एक निगाह में समझ ने नहीं आती, वह उससे हट लेते हैं। ऐसे में मेधा कमजोर होती चली जा रही है।

एक और भयावह परिदृश्य उत्पन्न हो रहा है। जो लोग मेधावी हैं वे अपना वक्त प्रोफेशनल उपलब्धियों को हासिल करने में लगा रहे हैं। वे शादी देर से करते हैं और कम बच्चे भी पैदा करते हैं। इसके विपरीत बेहुनर, बेअक्ल कम उम्र से ही संतान उत्पति में जुट जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में कमजोर मेधा वाले समाज में जल्द ही बहुसंख्यक हो जाएंगे।

गिरती मेधाशक्ति का एक और बड़ा कारण प्रदूषण है, खासकर रासायनिक प्रदूषण। प्लास्टिक का जहर तो है ही, साथ में कीटनाशक, आयोडीन की कमी, कुपोषण आदि भी हमारे थायराइड गतिविधियों के साथ खतरनाक छेड़छाड़ कर रहे हैं। कुल मिलाकर यह डर अब शोधकर्ताओं में व्याप्त हो गया है कि सभ्यतागत प्रतिलोम ही अब मानवमात्र का भविष्य है।

वैसे तो यह सब अध्ययन विदेशों में हुए हैं और कहा जा सकता है कि हिंदुस्तान पर लागू नहीं होते हैं, पर इनके परिणामों को नजरअंदाज करना घातक होगा। अगर हम थोड़ी-सी भी गंभीरता से अपने आसपास देखें तो साफ हो जाएगा कि हमारे बौड़मपन की दर में लगातार वृद्धि हो रही है। तर्कनिष्ठ व्यवहार और संवाद लगातार घट रहा है और हम हर मुद्दे के अति सरलीकरण में जुटे हुए हैं। हम संकल्पना और व्यावहारिक जटिलता से मुंह चुराने लगे हैं। शायद हमारी रोशनखयाली का बल्ब फ्यूज हो गया है और इसीलिए अतीत की अंधेरी गुफाओं में हमें जेहनी आराम मिलने लगा है। अगर हम सभ्यतागत प्रतिलोम को अपनी उपलब्धि मान रहे हैं, तो हमसे ज्यादा और कौन बौड़म हो सकता है?

हिंसा का सिलसिला

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

पहली नजर में लगा मुझे, जब टीवी पर वह फुटेज देखा, कि कोई गुंडा होगा जो बल्ले से एक निहत्थे अदमी को बेरहमी से मार रहा है। फिर जब टीवी पत्रकारों ने इस युवक से पूछा कि यह कर क्या रहे हैं, उसका जवाब था, 'पहले आवेदन, निवेदन, फिर दे दनादन।' बाद में मालूम पड़ा कि वह कोई गुंडा नहीं, भारतीय जनता पार्टी का विधायक है, आकाश विजयवर्गीय, जिसके पिता भाजपा के वरिष्ठ नेता हैं। फिर पता चला कि जिस व्यक्ति पर हमला हो रहा था वह इंदौर नगर पालिका का एक अधिकारी था, जिसको जिम्मेदारी दी गई थी जर्जर इमारतों को गिराने की, बरसात का मौसम शुरू होने से पहले। यानी वह सिर्फ अपनी जिम्मेदारी निभा रहा था। आकाश विजयवर्गीय को गिरफ्तार कर लिया गया है, लेकिन इस लेख के लिखे जाने तक उसको भारतीय जनता पार्टी से बर्खास्त नहीं किया गया है।

पिछले हफ्ते कानून को अपने हाथ में लेने की और भी घटनाएं सामने आईं। झारखंड के एक गांव में तबरेज अंसारी को खंभे से बांध कर पीटा अज्ञात भीड़ ने और पीटने वालों ने उससे बार-बार 'जय श्रीराम' और 'जय हनुमान' कहलवाया। घंटों बाद जब पुलिस आई उसको छुड़ाने, तो अस्पताल ले जाने के बदले उसको हिरासत में रखा। चार दिन बाद उसकी मौत हो गई। मुंबई में फैजल उस्मान खान अपनी रुकी हुई टैक्सी ठीक कर रहा था कि स्कूटर पर सवार कुछ अनजान लोग आए और उसको मारना शुरू कर दिया। पिटाई करते समय 'जय श्रीराम' कहलवाया। कोलकता में हाफिज मोहमद शाहरुख हल्दर नाम के मदरसा अध्यापक को चलती ट्रेन से फेंक दिया गया, जब उसने 'जय श्रीराम' कहने से इनकार किया। उत्तर प्रदेश के कासगंज में भारतीय जनता पार्टी के विधायक ने एक पुलिसवाले को तबादला करवाने की धमकी दी, जब उसने विधायक के दोस्तों को हिरासत से रिहा नहीं किया।

पिछले हफ्ते प्रधानमंत्री ने संसद के दोनों सदनों में शानदार भाषण दिए। नए भारत का चित्र खींचा अपने शब्दों से। सुरक्षित, समृद्ध, सशक्त भारत होगा यह नया भारत। राज्यसभा वाले भाषण में प्रधानमंत्री ने तबरेज अंसारी की मौत पर दुख व्यक्त किया और यह भी कहा कि ऐसी हिंसा चाहे झारखंड में हो, चाहे पश्चिम बंगाल में, किसी हाल में सही नहीं ठहराई जा सकती। मैंने उनके दोनों भाषण ध्यान से सुने, इस उम्मीद से कि प्रधानमंत्री यह भी कहेंगे कि लोकतंत्र का आधार है कानून-व्यवस्था का सुरक्षित होना।

> पिछले हफ्ते की हिंसक घटनाओं ने साबित कर दिया है कि कानून को अपने हाथों में लेने से लोग अब डरते नहीं हैं। विधायक जब ऐसा करने लगते हैं, तो आम लोगों को किस मुंह से कोई रोक सकेगा?

यह जरूर कहा प्रधानमंत्री ने कि किसी को अधिकार नहीं है कानून को अपने हाथों में लेने का, लेकिन क्या यह काफी है जब उनके पहले कार्यकाल में उनके समर्थकों ने गोरक्षा के नाम पर कई बार कानून को अपने हाथों में लिया? मेरी राय में काफी इसलिए नहीं है, क्योंकि जब लिंचिंग जैसी घटनाएं एक बार शुरू हो जाती हैं, तो उनको रोकना बहुत मुश्किल हो जाता है।

ऐसा नहीं कि ऐसी घटनाएं सिर्फ नरेंद्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद शुरू हुई हैं। पहले भी कानून को हाथ में लिया है हिंसक भीड़ों ने, दंगाइयों ने, गुंडों ने, माफिया डॉन किस्म के लोगों ने। सो, अब क्यों लगने लगा है कि ऐसी हिंसा को रोकना बहुत जरूरी हो गया है? इसलिए कि भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेताओं ने इस हिंसा का उतना विरोध नहीं किया कभी। निजी तौर पर मुझे कई भाजपा नेताओं ने कहा है कि गोरक्षकों की हिंसा ने मोदी के पहले दौर में उनकी छवि को नुकसान पहुंचाया है। मगर कुछ ज्यादा ही दबी जुबान में हुई हैं ऐसी बातें।

सो, गोरक्षकों की हिंसा रुकी नहीं कभी। अब ऐसा समय आ गया है कि गोरक्षा का बहाना भी नहीं रहा है। जिन मुसलमानों से 'जय श्रीराम' कहलवा कर पीटा गया पिछले हफ्ते उनमें से एक के पास न गाय थी न इनमें से कोई गोश्त बेचने या इधर से उधर ले जाने की कोशिश कर रहा था। कानून को हाथ में भारतीय जनता पार्टी के विधायकों ने भी अब लेना शुरू कर दिया है सिर्फ अपना रोब दिखाने के लिए। जब सरकारी अधिकारियों और पुलिसवालों पर हमले शुरू हो जाते हैं तो कानून व्यवस्था की रक्षा कैसे होगी?

मोदी ने दूसरी बार प्रधानमंत्री बनने के बाद कई अच्छी बातें की हैं। सबका साथ, सबका विकास के साथ उन्होंने सबका विश्वास जीतने की बात कही थी जब अपने नए निर्वाचित सांसदों को पहली बार संसद में संबोधित किया। इस भाषण के बाद उन्होंने संविधान के सामने माथा टेका जैसे किसी धार्मिक ग्रंथ के सामने माथा टेका जाता है। बहुत अच्छा लगा उनको ऐसा करते देख कर। मगर याद करना जरूरी हो गया है कि संविधान के सारे खंभे खड़े हैं कानून-व्यवस्था की बुनियाद पर। जब कानून-व्यवस्था सुरक्षित नहीं रहती है तो संविधान का सुरक्षित रहना असंभव है।

पिछले हफ्ते की हिंसक घटनाओं ने साबित कर दिया है कि कानून को अपने हाथों में लेने से लोग अब डरते नहीं हैं। विधायक जब ऐसा करने लगते हैं, तो आम लोगों को किस मुंह से कोई रोक सकेगा? सो, अगर प्रधानमंत्री अपने 'नए भारत' का सपना साकार करना चाहते हैं, तो उनका पहला कदम होना चाहिए अपनी पार्टी से उन विधायकों को बर्खास्त करना, जिन्होंने पिछले हफ्ते सरकारी अधिकारियों और पुलिसवालों पर हमले किए। ऐसा करने के बाद उनको स्पष्ट शब्दों में कहना होगा कि ऐसी हिंसा के लिए उनके नए भारत में कोई जगह नहीं है। भीड़ द्वारा की गई हिंसा बेकाबू हो गई है और कानून को कुचल डालने की आदत भी।

निवेदन, आवेदन और दनादन

बारखबर

■ सुधीश पचौरी

गुप्ताजी के बेटों की शादी। दो सौ करोड़ की महंगी शादी! चुपके चुपके हो गई उत्तराखंड के औली क्षेत्र में। सबकी खबर लेने वाले चैनलों को भी इसकी खबर न हुई और जब तक खबर लगी, तब तक तो बहुओं को लेकर उड़ गए अपने गुप्ता जी अफ्रीका की ओर! हमारे उठाने के लिए वे चार सौ टन कूड़ा अवश्य छोड़ गए।

हर बात पर रोज कांय कांय करने वाले चैनलों को इस शादी की दिव्यता की खबर तक न हुई? क्यों? ऐसे कैसे चलेगा साथी! जब तक आप 'दिल्ली सेंट्रिक' और उसमें भी 'सरकार सेंट्रिक' रहेंगे तब तक आप ऐसे ही बेखबर रहेंगे।

कितना अच्छा है कि किसी की बनाई-बताई खबरें मिलती रहती हैं। जैसे तमिलनाडु में पानी-संकट! फिर कर्नाटक का पानी-संकट!

महाराष्ट्र के सूखे को लेकर कब तक रोएं आप, जहां हर दिन आठ किसान आत्महत्या करते हैं। फिर अब मुंबई में बारिश होने लगी है, बताइए वहां पानी के भराव की खबरें बनाएं कि आत्महत्याओं की। देंगे वहां पानी के भराव की खबरें। कितने बढ़िया लगते हैं भीगे रिपोर्टर और उनकी भीगी-भीगी खबरें।

इस बीच संसद सत्र में पीएम ने अपने जवाबी भाषण में कांग्रेस की जो प्रेमपूर्वक धुलाई की उसका जवाब कांग्रेस से न बन पड़ा। धुलाई के दौरान राहुल खामोश ही रहे। एक बार मुस्कराए भी।

मगर कांग्रेस के नेता अधीर रंजन जी एक अन्य ससंदीय प्रसंग में जो 'प्रवोक' हुए, सो 'आ बैल मुझे मार' वाली बात कर बैठे! कह दिए कि मुझे प्रवोक किया जा रहा था, तो मैं कह गया कि कहां गंगा, कहां नाली! फिर संसद के बाहर निकल कर बोले कि मेरी हिंदी इतनी अच्छी नहीं है, नाली से मेरा मतलब चैनल था।... हिंदी अच्छी नहीं थी तो सर जी हिंदी की टांग क्यों तोड़े?

इसके बाद, झारखंड के सरायकेला में तबरेज की लिंचिंग की खबर एक बार आई तो दो दिन तक छाई रही। एक चैनल पर एक भाजपा प्रवक्ता बोले कि मैं किसी हिंसक कार्रवाई को उचित नहीं ठहरा सकता, लेकिन बार-बार यह कहना कि 'जय श्रीराम' बुलवाया जा रहा था, यह ठीक नहीं। सब लोग ऐसी घटना को भाजपा से जोड़ देते हैं। 'जय श्रीराम' तो जनता का अधिकार है, सबको भाजपा, बजंरग दल से जोड़ देना ठीक नहीं।

एंकरः माना कि उस पर साइकिल चोरी का आरोप था, लेकिन इनको किसने हक दिया उसे मारने का? उसे बांधा गया। उसे मारा गया। वह पिटता कहता रहा, मुझे छोड़ दो। मुझे छोड़ दो। किसने हक दिया मारने वालों को उसे मारने का?

प्रवक्ताः जिन्होंने यह सब किया है उन पर कार्रवाई हो। भाजपा 'सबका साथ सबका विकास' का काम करती है। कोई भी ऐसा करता है तो हम विरोध करते हैं। इसका राजनीतिकरण नहीं किया जाना चाहिए!

> भाजपा के बड़े नेता कैलाश विजयवर्गीय के एमएलए सुपुत्र आकाश ने जिस तरह निगम के अधिकारियों पर सरेआम बल्ला घुमाया, वह वर्ल्ड कप से भी बड़ी खबर बना। वीडियो में आकाश अपनी बल्ला-लीला दिखाते रहे।

अपने खबर चैनल बड़े ही 'न्यायप्रिय' हैंः वे एक ओर 'लिचिंग' को खबर बनाते हैं, दूसरी ओर 'लिंचिंग' पर बहस भी कराते हैं, मानो 'लिचिंग' न हो किसी नेता का 'विवादास्पद बयान' हो! बहरहाल, बहस कुछ इस तरह आगे बढ़ी-

एंकरः भगवान राम ने अपने नाम पर क्या 'लिंचिंग' करने को कहा था?

प्रवक्ताः लिंचिंग दुखद है, डिस्टर्बिंग है। उस पर चोरी का आरोप था।

एंकरः चोरी का आरोप है, तब भी क्या 'लिंच' करना ठीक है?

प्रवक्ताः इसमें भाजपा कहां से आ गई?

एंकरः हम भाजपा का नाम नहीं ले रहे!

बीच में एक आंकड़ाप्रिय विचारक कहने लगे कि मथुरा में एक हिंदू की लिंचिंग हुई।... सोलह मामले ऐसे हुए हैं। कहीं मुसलमान ने मारा, कहीं हिंदू ने मारा, लेकिन जब कहीं हिंदू मॉब मारती है तभी शोर होता है।...

यानी कि जब आप हिंदू को लिंच कर दिए जाने पर शोर नहीं करते, तो अभी क्यों कर रहे हो?

हमारे खबर चैनल ऐसी बहसों के जरिए मुद्दों को इसी तरह गड़बड़ाया करते हैं!

एक दिन खबर हुई कि भारतीय क्रिकेट टीम को एक दिन के मैच में नारंगी रंग की जर्सी पहननी है। एक कांग्रेस एमएलए की जुबान खुल गई और उन्होंने कह दिया कि जर्सी के बहाने क्रिकेट का भगवाकरण किया जा रहा है।

कई चैनलों को कांग्रेस की ठुकाई के लिए सिर्फ बहाना चाहिए। एंकर बोलाः देखो कांग्रेस क्रिकेट को भी राजनीतिक रंग दे रही है। एक अंग्रेजी चैनल में शशि थरूर ने साफ कहा कि जर्सी के रंग को राजनीतिक रंग न दिया जाय। मगर जिनको कांग्रेस को कूटना था, वे कूटते रहे।

क्रिकेट वर्ल्ड कप के इन्हीं केसरिया दिनों में भाजपा के बड़े नेता कैलाश विजयवर्गीय के एमएलए सुपुत्र आकाश ने जिस तरह निगम के अधिकारियों पर सरेआम बल्ला घुमाया, वह वर्ल्ड कप से भी बड़ी खबर बना। वीडियो में आकाश अपनी बल्ला-लीला दिखाते रहे।

जब आकाश से पूछा गया कि आपने क्रिकेट का बल्ला मनुष्यों पर क्यों घुमाया, तो कह उठे कि जनता के लिए ऐसा करना हुआ, तो फिर से करूंगा।... जब उनको पुलिस ने गिरफ्तार किया, तो निगम अधिकारियों पर भी एफआइआर की गई।

इसी बीच एक अंग्रेजी एंकर ने आकाश की एक दार्शनिक किस्म की बाइट देकर हम सबको धन्य कर दिया। पहली बार हमारे शब्दकोश में तीन शब्दों को नए अर्थ मिले। एंकर बोला कि आकाश विजयवर्गीय कह रहे हैं कि हम पहले 'निवेदन' करते हैं, फिर 'आवेदन' करते हैं और फिर 'दनादन' करते हैं!